दैनिक जागरण

शिक्षा की जड़ें कड़वी हैं, लेकिन फल मीठे हैं

मुफ्तखोरी की राजनीति

दिल्ली मेट्रो के चौथे चरण की परियोजना से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर विचार करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने देश की राजधानी में महिलाओं को मेट्रो यात्रा की मुफ्त सुविधा देने की केजरीवाल सरकार की प्रस्तावित योजना पर जो सवाल खड़े किए वे जरूरी थे। उम्मीद की जाती है कि दिल्ली सरकार सुप्रीम कोर्ट के इन सवालों पर न केवल गौर करेगी, बल्कि चुनावी लाभ को ध्यान में रखकर तैयार की गई अपनी प्रस्तावित योजना को ठंडे बस्ते में भी डालेगी। इसका कोई मतलब नहीं कि अपेक्षाकृत समर्थ और संपन्न मानी जाने वाली देश की राजधानी की सभी महिलाओं को गरीब मानकर उन्हें मेट्रो और सरकारी बसों में मुफ्त यात्रा की सुविधा प्रदान की जाए। यह सुविधा उपलब्ध कराने के पीछे दी जा रही यह दलील खोखली ही अधिक है कि इससे कारों एवं दोपहिया वाहनों के इस्तेमाल में कमी आएगी और उसके चलते प्रदूषण से निपटने में मदद मिलेगी। शायद यही कारण रहा कि सुप्रीम कोर्ट ने महिलाओं को मेट्रो की मुफ्त यात्रा की प्रस्तावित योजना पर बिना किसी लाग लपेट यह कहा कि सरकार इस तरह जनता के धन की बर्बादी नहीं कर सकती। उसकी समझ से ऐसी कोई योजना दिल्ली मेट्रो को बर्बाद करने वाली साबित हो सकती है।

यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट ने मुफ्तखोरी की राजनीति की ओर बढ़ रही दिल्ली सरकार को समय रहते आगाह करने का काम किया, लेकिन उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि राजनीतिक लाभ हासिल करने के लिए सार्वजनिक कोष के धन की अनदेखी करने का यह इकलौता मामला नहीं है। निर्धनता निवारण या लोक कल्याण के नाम पर रह-रह कर ऐसी योजनाएं सामने आती ही रहती हैं जिनका असली मकसद गरीबों को आत्मनिर्भर बनाना कम और चुनावी लाभ हासिल करना अधिक होता है। इस मामले में सभी दल एक जैसे नजर आते हैं। बीते कुछ समय से यह कुछ ज्यादा ही देखने को मिल रहा है कि चुनाव आते ही विभिन्न दल रेवड़ियां बांटने की होड़ में शामिल हो जाते हैं। उनकी ओर से मुफ्तखोरी की संस्कृति को बढ़ावा देने वाली योजनाओं की घोषणा का सिलसिला कायम हो जाता है। कुछ दल तो लोक-लुभावन वादों को अपने घोषणा पत्रों का हिस्सा भी बना देते हैं। यदि कभी ऐसे दल सत्ता में आ जाते हैं तो इस आधार पर अपने लोक-लुभावन वादों पर आनन-फानन अमल शुरू कर देते हैं कि वे इसी वादे के साथ सत्ता में आए हैं। आम तौर पर ऐसा करते हुए वे आर्थिक नियमों की जानबूझकर उपेक्षा करते हैं। चूंकि राजनीतिक दल लोक-लुभावन राजनीति करते समय आर्थिक नियम-कानूनों की परवाह नहीं कर रहे इसलिए सुप्रीम कोर्ट को कहीं अधिक सजग रहने की जरूरत है।

सुधारने के लिए जुर्माना

केंद्र सरकार ने ट्रैफिक नियमों को लेकर जुर्माने की राशि कई गुना बढ़ाकर लोगों को सुधारने का एक अनोखा प्रयास किया है। भारी जुर्माना अदा करने की खबरों से ही झारखंड में लोगों में नियमों के प्रति जागरूकता बढ़ी है और प्रदूषण प्रमाणपत्र एवं बीमा जैसे आवश्यक कागजात दुरुस्त होने लगे हैं। बगैर ड्राइविंग लाइसेंस के लोग सड़कों पर चलने से पहले घबरा रहे हैं और हेलमेट पहनने अथवा सीट बेल्ट लगाने जैसे सुरक्षा उपायों का पूरा पालन कर रहे हैं। ऐसा भले ही जुर्माना के डर से हो रहा हो, लेकिन नियमों का अनुपालन कहीं न कहीं आवश्यक भी था। सो, एक बार इस प्रयास की सराहना तो होनी ही चाहिए। कुछ लोग जुर्माने की बड़ी राशि पर सवाल उठा रहे हैं। जिन लोगों को भारी जुर्माना अदा करना पड़ा उनका दुख जायज भी माना जा सकता है, लेकिन सवाल यह भी है कि जुर्माना वसूला कैसे लोगों से जा रहा है। उन्हीं लोगों से जिन्होंने कहीं न कहीं नियमों की अनदेखी की है। नियमों को रौंदा है। सो, फिलहाल जुर्माना से अधिक महत्वपूर्ण इसका प्रतिफल है। लोग अगर जुर्माने के डर से हेलमेट पहनकर निकल रहे हैं अथवा ड्राइविंग लाइसेंस बनवा रहे हैं तो फिर इसे सही निर्णय ही मानेंगे। गरीब लोगों से अधिक राशि वसूली पर भी मानवीय संवेदनाएं जग रही हैं, लेकिन किसी की गरीबी उसे नियमों को तोड़ने-मरोड़ने की छूट तो नहीं देती। गरीबी पर कहीं भी किसी कानून में डिस्काउंट तो नहीं है। ऐसे में नियम तोड़ने के दोषी को सजा मिलना कतई गलत नहीं है। अभी तक जितने बड़े मामले आ रहे हैं उनमें फंसनेवाले लोग गरीब तबके के और ग्रामीण परिवेश के अधिक हैं। पुलिस को इसके लिए थोड़ी सतर्कता बरतनी होगी ताकि चालाक लोग बच न सकें। शहरों में रहनेवाले युवा दूर से ही पुलिस की मौजूदगी को भांप जाते हैं और रास्ता बदल भी लेते हैं, लेकिन ग्रामीण परिवेश के युवा फंस जाते हैं। रांची में महिलाओं को भी जुर्माना किया गया है। छह हजार रुपये तक का जुर्माना। यह इस बात का उदाहरण है कि कोई बच नहीं रहा है और पुलिस के लिए यही एक शुभ संकेत है। एक बड़ा समूह अभी पुलिस पर नजर रख रहा है और पुलिस को भी ऐसे में सावधानी बरतने की जरूरत है।

> अगर जुर्माने के डर से लोग हेलमेट पहनकर निकल रहे हैं तो फिर इसे सही निर्णय ही मानेंगे

साहसिक फैसलों की जरूरत

जीएन वाजपेयी

सुस्ती के भंवर में फंसी अर्थव्यवस्था को उबारने के लिए तत्काल कुछ बड़े फैसले लेने होंगे ताकि जीडीपी की ऊंची वृद्धि के दौर में दाखिल हुआ जा सके

अवधेश राजपूत

वर्ष 2014 के आम चुनाव में भाजपा 'सबका साथ, सबका विकास' के जिस नारे के साथ चुनाव में उतरी थी वह कारगर रहा। इस नारे ने मतदाताओं के मानस को ऐसे प्रभावित किया कि भाजपा लोकसभा की 282 सीटें जीत गई। 2019 के आम चुनाव में मोदी है तो मुमकिन है नारे ने असर दिखाया और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी पिछली बार से भी बड़ी सफलता के साथ 303 सीटों के साथ सत्ता में वापस लौटे। 2019 के चुनाव में जीत के बाद भाजपा मुख्यालय में पार्टी कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने 'सबका साथ, सबका विकास' नारे में 'सबका विश्वास' और जोड़ दिया। इस नए जुड़ाव के साथ उन्होंने राजनीतिक विमर्श को जो नई दिशा दी उस पर बहुत ज्यादा टीकाकारों ने गौर नहीं किया। यदि इसकी गहराई से पड़ताल की जाए तो मालूम पड़ेगा कि मोदी एक आम नेता से राजनेता यानी स्टेट्समैन बनने की ओर बढ़ रहे हैं। एक नेता वही होता है जो अपने राजनीतिक फायदे के लिए किसी एक तबके के हितों से खिलवाड़ कर सकता है। जबकि राजनेता आदर्शवादी दृष्टिकोण को अपनाते हुए अपने मूल्यों पर अडिग रहता है। जब पीवी नरसिंह राव प्रधानमंत्री थे तो उन्होंने कश्मीर पर भारत का पक्ष रखने के लिए तब विपक्ष में नेता रहे अटल बिहारी वाजपेयी को संयुक्त राष्ट्र के मंच पर भेजने का फैसला किया। दलगत भावना से परे लिए गए राव के इस फैसले को अक्सर स्टेट्समैनशिप की मिसाल बताया जाता है।

2019 में भाजपा को 37.4 प्रतिशत मत मिले। इसका अर्थ है कि 62.6 फीसद मतदाताओं ने मोदी के नेतृत्व पर भरोसा नहीं जताया। ऐसे में वह महज समर्थन और वृद्धि से बढ़कर अपने दर्शन को बदलते हुए सबका विश्वास जीतने में जुटे हैं। यह एक विचारणीय बदलाव है। वह सभी का विश्वास अर्जित कर देश के सर्वमान्य नेता बनना चाहते हैं जिसका अर्थ यही है कि वह दलगत राजनीति से परे जाकर नया मुकाम हासिल करने के इच्छुक हैं। अपने पहले कार्यकाल में उन पर आरोप लगे कि कथित गोरक्षकों की शरारती गतिविधियों पर उन्होंने या तो प्रतिक्रिया ही नहीं दी या फिर बहुत देर से ऐसा किया। 2019 के जनादेश के बाद उन्होंने ऐसे किसी भी वाकये पर त्वरित प्रतिक्रिया व्यक्त की है और यहां तक कि संसद में बयान भी दिया। कहने का अर्थ यह नहीं कि ऐसी अप्रिय घटनाओं पर उन्हें पहले जरा भी दर्द महसूस नहीं हुआ, लेकिन अब यह और स्पष्ट है कि वह भारत का भरोसा हासिल करने के लिए अतिरिक्त प्रयास कर रहे हैं। इसी सिलसिले में 30 अगस्त को कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए उन्होंने हिदायत दी कि वे संवाद और आलोचना के दौरान मर्यादा और शालीनता का परिचय दें। भारत एक जीवंत एवं गतिशील लोकतंत्र है। फिर भी मोदी सरकार के कट्टर आलोचक अलग ही राग अलाप रहे हैं। उनमें से कुछ यहां तक कह रहे हैं कि लोकतंत्र की मूल भावना के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है। उनके ऐसे दावों की पड़ताल के लिए कोई भी भारतीय प्रेस की स्वतंत्रता, न्यायपालिका की स्वायत्तता और स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव जैसे पैमानों पर दुनिया के सबसे परिपक्व लोकतंत्रों के साथ इसकी तुलना कर सकता है। अनुच्छेद 370 और 35ए हटाए जाने के खिलाफ दायर याचिकाओं को सुप्रीम कोर्ट द्वारा सुनवाई के लिए स्वीकार करना स्वतंत्र न्यायपालिका की ताजा मिसाल है।

स्वतंत्र न्यायपालिका अपने विवेक से कार्यपालिका की गतिविधियों की भी समीक्षा कर रही है, जो परंपरा से इतर है। कुछ मामलों में तो उसने कानून बनाने के निर्देश तक दिए हैं। ऐसा ही एक फैसला मुस्लिम महिलाओं के साथ पक्षपात से जुड़ा था। पिछली सरकारें वोट बैंक छिटकने के डर से ऐसे अदालती निर्देशों पर अमल करने से कतराती थीं। ऐसे में समाज का पीड़ित वर्ग पक्षपात सहने के लिए अभिशप्त रहता था। अपने पहले कार्यकाल में प्रधानमंत्री मोदी ने सुप्रीम कोर्ट के निर्देश को मूर्त रूप देने की कोशिश की, लेकिन वे प्रयास फलीभूत नहीं हो पाए। मगर 2019 में वह समानता एवं निष्पक्षता के सिद्धांतों को संसद के पटल पर ले आए और उनके साथियों ने सदन में संख्याबल का बखूबी प्रबंध किया। अमेरिकी राष्ट्रपति के रूप में अब्राहम लिंकन ने जब दासता को समाप्त कराने वाला कानून सीनेट से पारित करा लिया था तब उनके कुछ आलोचकों ने उन पर स्तरहीन सिद्धांतों को अपनाने का आरोप लगाया था। हर एक फैसले के कई पहलू होते हैं। इस मामले में भी कुछ ऐसा हो सकता है, लेकिन अगर मुस्लिम महिलाओं की बेहतरी की बात हो रही है तो यह जरूर कहा जा सकता है कि भारत में लोकतंत्र फल-फूल रहा है।

आर्थिक उत्थान के लिए भारतीयों का एक बड़ा तबका बीते 72 वर्षों से टकटकी लगाए हुए है। इसे केवल आर्थिक वृद्धि से ही संभव बनाया जा सकता है। प्रधानमंत्री मोदी ने अगले पांच वर्षों में देश की अर्थव्यवस्था को पांच ट्रिलियन डॉलर तक पहुंचाने का लक्ष्य रखा है। राजनीतिक गलियारों और मीडिया की दुनिया में आलोचक इसका उपहास उड़ा रहे हैं। कुछ अर्थशास्त्री इसे असंभव बता रहे हैं तो कुछ इसे लेकर आशंकाएं जाहिर कर रहे हैं। मौजूदा आर्थिक सुस्ती को वे अपनी धारणा की पुष्टि के रूप में पेश कर रहे हैं। जो भी हो, आने वाले समय में मोदी सरकार की क्षमताओं की कड़ी परीक्षा होनी है। पांच ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था देश से गरीबी का समूल नाश भले न कर पाए, लेकिन इससे गरीबों की तादाद घटने की भरी-पूरी संभावनाएं हैं।

जन-धन, आधार और मोबाइल यानी जैम, मुफ्त गैस एवं बिजली कनेक्शन, सभी को आवास, किसान सम्मान, मुद्रा और आयुष्मान भारत जैसी योजनाओं का बिना किसी भेदभाव के सफल क्रियान्वयन देश की आबादी के एक बड़े और विपन्न तबके के जीवन स्तर में व्यापक स्तर पर सुधार ला रहा है। हालांकि सुस्ती के भंवर में फंसी अर्थव्यवस्था को उबारने के लिए तत्काल कुछ साहसिक फैसले लेने होंगे ताकि जीडीपी की ऊंची वृद्धि के दौर में दाखिल हुआ जा सके। मोदी सरकार ने पहले कार्यकाल में जीएसटी, दिवालिया संहिता और रेरा जैसे कुछ प्रमुख संरचनागत सुधार किए। कुछ सुधार अपनी बारी का इंतजार कर रहे हैं। ऐसे सुधार और उनका प्रभावी क्रियान्वयन आने वाले कई दशकों के लिए ऊंची वृद्धि का आधार उपलब्ध करा सकता है। वे भारतीयों की आंखों से गरीबी के आंसू पोंछ सकता है।

भारत लोकतंत्र और जनसांख्यिकी के सुखद संयोग का लाभ उठाने की और अधिक प्रतीक्षा नहीं कर सकता। अपने दूसरे कार्यकाल में मोदी सरकार आम आदमी के भरोसे को नहीं तोड़ेगी। उम्मीदों से लबरेज भारत मोदी की तत्परता और उनकी क्षमताओं में पूरा भरोसा रखता है। भारत उनके फैसलों का समर्थन करेगा, भले ही वे निर्णय कितने ही कड़े क्यों न हों।

(लेखक सेबी और एलआइसी के पूर्व चेयरमैन हैं)

response@jagran.com

एथनॉल के समृद्ध स्रोत की अनदेखी

डॉ. ब्रजेश शर्मा

भारत की ईंधन आवश्यकता को पूरा करने में महुआ से बना एथनॉल महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है

बीते दिनों आर्थिक मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति की बैठक में एथनॉल से संबंधित जो कई फैसले लिए गए उनमें एक यह भी था कि सरकारी तेल कंपनियां अब चीनी से बनाए गए एथनॉल की खरीद कर सकेंगी। सरकार को उम्मीद है कि एथनॉल की खरीद बढ़ाकर वह इस वर्ष तेल आयात बिल में एक फीसद की कमी कर सकेगी। भारत सरकार ने 1980 में राष्ट्रीय जैव ईंधन नीति घोषित की थी। इसके तहत डीजल में जैव ईंधन और पेट्रोल में एथनॉल के मिश्रण को प्रोत्साहित किया जाना था। यह वर्तमान में अनिवार्य 10 प्रतिशत से काफी कम है। उल्लेखनीय है कि ब्राजील में 40-50 प्रतिशत एथनॉल का मिश्रण हो रहा है। अपने देश में सकल घरेलू उत्पाद में सड़क परिवहन का हिस्सा 67 प्रतिशत है। अकेले परिवहन क्षेत्र में ही 72 प्रतिशत डीजल और 23 प्रतिशत पेट्रोल का उपयोग सीएनजी-एलपीजी आदि के अलावा किया जा रहा है। आगे यह खपत कई गुना बढ़ेगी। पेट्रोल में एथनॉल मिश्रण एक ज्यादा व्यावहारिक हल माना जाता है। एथनॉल में ऑक्सीजन की मात्रा अधिक होती है जिससे यह कम प्रदूषण उत्पन्न करता है। 10 प्रतिशत अनिवार्य मिश्रण के लिए वर्तमान में लगभग 400-500 करोड़ लीटर एथनॉल की आवश्यकता है, जबकि उत्पादन तीन सौ करोड़ लीटर ही हो रहा है। इसमें से रासायनिक उद्योगों के अलावा 170 करोड़ लीटर एथनॉल आबकारी-शराब बनाने में चला जाता है। लक्षित आवश्यकता और एथनॉल की उपलब्धता के बीच अभी भी भारी अंतर है।

वर्तमान में एथनॉल मुख्यतया: गन्ना से हासिल किया जाता है, लेकिन देश में महुआ भी उसका एक समृद्ध स्रोत है। महुआ के वृक्ष मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश तेलंगाना, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल राज्यों में ठीक-ठाक संख्या में हैं। इसके एक पेड़ की आयु 50-60 वर्ष तक होती है। 500 किलो महुए से लगभग 350 लीटर एथनॉल प्राप्त किया जा सकता है। देश भर में महुआ की अनुमानित उपज 5 मिलियन मीट्रिक टन है जिसमें से केवल 0.85 मिलियन टन ही एकत्र किया जाता है जो संपूर्ण उपज का लगभग 17 प्रतिशत है। शेष महुआ जो एकत्र नहीं होता, जानवरों या पक्षियों द्वारा खा लिया जाता है अथवा अवैध रूप से देसी शराब बनाने के काम में लाया जाता है। यदि महुआ का समुचित उपयोग किया जाए तो देश में भारी मात्रा में एथनॉल का उत्पादन किया जा सकता है। दुर्भाग्यवश एथनॉल के इस महत्वपूर्ण स्रोत पर भारत सरकार का ध्यान नहीं जा सका है।

महुआ से उत्पादित एथनॉल गन्ना से उत्पादित एथनॉल की तुलना में आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरण दृष्टि से अधिक लाभकारी है। महुए का वृक्ष गन्ने की तरह भारी सिंचाई, आयातित रासायनिक खाद एवं कीटनाशक जैसी अतिरिक्त लागत के बिना प्राकृतिक रूप से विकसित होता है। महुआ से सीधे एथनॉल बनाया जा सकता है, जबकि गन्ने से एथनॉल की प्राप्ति के लिए कई प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है जिससे उत्पादन लागत बढ़ जाती है। इससे अवैध शराब निर्माण को रोकने में भी मदद मिलेगी। इसके अलावा गरीब और हाशिये पर रहने वाले लोगों, आदिवासियों, महिलाओं के लिए यह अतिरिक्त आय का साधन भी बनेगा। महुआ के पेड़ गन्ने की तुलना में वायु से अधिक कार्बन डाई ऑक्साइड अवशोषित कर अधिक ऑक्सीजन भी देते हैं।

हाल में नीति आयोग ने देश में उभरते जल संकट को लेकर चेतावनी दी है, क्योंकि गन्ना उत्पादक क्षेत्र में भूमिगत जल स्तर का गंभीर रूप से क्षरण हो गया है। वर्तमान में भारत में कुल बोये गए क्षेत्र का लगभग तीन प्रतिशत गन्ना होता है। एथनॉल के 10 प्रतिशत मिश्रण को प्राप्त करने के लिए भारत को गन्ना उत्पादन के लिए अपने सकल बोये गए क्षेत्र का अतिरिक्त चार प्रतिशत समर्पित करना होगा। जाहिर है कि ऐसे में अन्य जीवन उपयोगी फसलों का उत्पादन प्रभावित होगा। परिणामतः इससे भूजल का भारी ह्रास होगा और खाद्यान्न के मूल्यों में भी वृद्धि हो सकती है। समय आ गया है कि भारत सरकार महुआ से एथनॉल उत्पादन पर गंभीरता से ध्यान दे। ईंधन आवश्यकता को पूरा करने में महुआ से हासिल एथनॉल महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

response@jagran.com

ऊर्जा

जीवन की सार्थकता

जिसका जन्म हुआ है, उसकी मृत्यु निश्चित है। यही परम सत्य है। मनुष्य खुशनसीब है कि उसे परमात्मा का दिया हुआ जीवन उपहार स्वरूप मिला है, परंतु अफसोस की बात है कि दुनियादारी में रहकर वह कंकड़-पत्थर बटोरने में इतना तल्लीन हो जाता है कि उसे अपने जन्म की सार्थकता और श्रेयस पथ का कभी स्मरण तक नहीं होता है। युवावस्था सपने संजोने में बिताता है और जब वृद्धावस्था आती है तब सिवाय पश्चाताप और सामने खड़ी मौत के कुछ नजर नहीं आता है। धीरे-धीरे सारे साथी छूटने लगते हैं और उसके बनाए हुए ताने-बाने में वह स्वयं फंसने लगता है। अवसान पर जाने से पहले उसे अवसाद घेरने लगता है। कोई राह नहीं दिखती, जो उसके लिए रोशनी का सबब बन सके और मौत के दर्द को सुकून के अहसास में बदल सके। ऐसे में विरले लोग ही होते हैं, जिनके अंदर जागृति आती है।

हममें से ज्यादातर लोग तो जीवन के अंतिम बेला तक भी नहीं जगते हैं। वे भूल जाते हैं कि जब मौत की शहजादी चलकर आएगी, तब न सोना काम आएगा न चांदी काम आएगी। इसलिए मृत्यु के पार जाने से पहले मैं एक निवेदन करना चाहूंगा कि हम भी मानवीयता के लिए कुछ ऐसा करें, जिससे जाने के बाद लोग हमें याद करें। अभी तक अपनों के लिए बहुत जिए, अब कुछ परहित के लिए भी जिएं। उनके लिए जो समाज की मुख्यधारा से वंचित हैं, निराश्रित हैं, असहाय हैं, बेसहारा हैं। आप यदि उनके चेहरे पर हंसी ला सकते हैं तो समझिए आपका जीवन जीना सार्थक है, क्योंकि जब जीवन में अंतिम समय आएगा तो आपसे यह नहीं पूछा जाएगा कि आपने कितना पढ़ा है, बल्कि यह पूछा जाएगा कि आपने क्या किया है।

झूठी अकड़, झूठे दिखावे में कुछ नहीं रखा है। आपसी प्रेम और भाईचारे के सहारे मनुष्य अप्रतिम संगठन तैयार कर सकता है, दूसरों को सम्मान देकर अपने और पराए का भेद मिटा सकता है। इसलिए आज ही कुछ अच्छा करने के लिए उठिए, जगिए और चल पड़िए, क्योंकि सब कुछ यहीं धरा रह जाएगा।

शंभू नाथ पांडेय

तथ्य-कथ्य | रहने के लिहाज से सबसे बेहतर शहर

(रेटिंग 100= आदर्श स्थिति)

स्रोत : द इकोनॉमिस्ट इंटेलिजेंस यूनिट

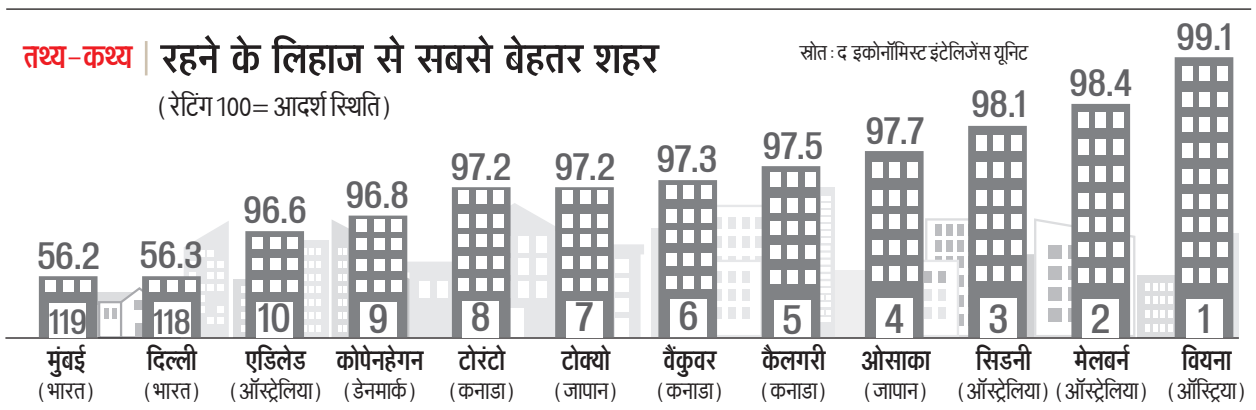

शिक्षा, शिक्षक और समाज

सुधीर कुमार

शिक्षण पेशे में योग्य लोगों के आने से ही शिक्षा के क्षेत्र में नई प्रतिभाएं आएंगी तथा इसकी गुणवत्ता बढ़ेगी

भारतीय संस्कृति एवं समाज में शिक्षकों को अत्यंत सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। प्राचीन काल की गुरुकुल परंपरा से लेकर वर्तमान की विद्यालयी शिक्षा के दौर तक हर युग में शिक्षक पूजनीय रहे हैं। समाज को संवारने, उचित दिशा दिखाने तथा छात्रों को नैतिक रूप से धनवान बनाने में शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। अच्छे शिक्षकों का समाज में सदा ऊंचा स्थान रहा है और आगे भी रहेगा। जिस देश में शिक्षकों को सम्मान नहीं है, वह राष्ट्र किसी भी मोर्चे पर तरक्की की नई इबारतें नहीं लिख सकता! किसी व्यक्ति के जीवन में माता-पिता के बाद शिक्षक ही सबसे बड़ा मार्गदर्शक होता है। एक शिक्षक छात्र को नया जीवन देता है। उसे अंधकार से प्रकाश की ओर चलना सिखाता है। शिक्षक विद्यार्थियों को सफलता दिलाने में भूमिका निभाने के साथ-साथ उन्हें दुनिया को मुट्ठी में करने की भी प्रेरणा देता है। यही वजह है कि छात्रों के मन में अपने शिक्षकों के प्रति श्रद्धा का अटूट भाव समाहित रहता है। शिक्षक अगर मेहनती और जुझारू हों तो इसका प्रभाव उनके शिष्यों पर भी परिलक्षित होता है। शिक्षक देश को प्रगति के पथ पर अग्रसर रखने में अहम भूमिका निभाते हैं। शिक्षक देश की मजबूती के आधार स्तंभ होते हैं।

किसी शिक्षक की पहचान अध्यापन के प्रति उनकी दिलचस्पी से ही होती है। हालांकि अध्यापन के प्रति समर्पण का जो भाव कुछ दशक पहले तक शिक्षकों के भीतर था, वह भाव शिक्षा के बाजारीकरण के बाद कम होता दिखाई दिया है! कई शिक्षक अपना पूरा ध्यान विद्यालय में अध्यापन पर केंद्रित करने के बजाय कोचिंग क्लासेस में अधिक रुचि लेते दिखते हैं। दरअसल मौजूदा समय में कोचिंग को सफलता का पर्याय समझा जाने लगा है, जिसकी वजह से कोचिंग एक व्यवसाय के रूप में बड़ी तेजी से उभरा है। पहले कोचिंग वे छात्र लेते थे, जो किसी खास विषय की पढ़ाई में कमजोर होते थे, लेकिन आज सभी मुख्य विषयों की कोचिंग लेने का फैशन चल पड़ा है। कोचिंग पर अत्यधिक निर्भरता की वजह से विद्यार्थियों में स्व अध्याय की प्रवृत्ति भी कम होती जा रही है, जबकि स्व अध्याय कोचिंग का सर्वोत्तम विकल्प है! लेकिन छात्र इससे बचते नजर आते हैं, जिसका असर उनके कक्षा-प्रदर्शन पर पड़ता है!

विडंबना यह भी है कि आज शिक्षक बनना अधिकांश युवाओं का प्राथमिक लक्ष्य नहीं रह गया है। इंजीनियरिंग, मेडिकल तथा लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में सफलता हाथ न लग पाने के बाद युवक शिक्षक बनने की ओर कदम बढ़ाता है। एक शिक्षक अपने श्रम और जुनून से दर्जनों आइएएस अफसर, डॉक्टर और इंजीनियर तैयार कर सकता है। बावजूद इसके आज के युवा अध्यापन के प्रति रुचि नहीं दिखा रहे हैं, जो चिंता की बात है। शिक्षक बनना युवाओं का अंतिम नहीं पहला लक्ष्य होना चाहिए। शिक्षण पेशे को सम्मानित नजर से देखने तथा योग्य लोगों के इस पेशे में आने से ही शिक्षा के क्षेत्र में नई प्रतिभाएं आएंगी तथा इसकी गुणवत्ता बढ़ेगी। इससे शिक्षा के क्षेत्र को पुराना गौरव भी प्राप्त होगा।

(लेखक बीएचयू में अध्येता हैं)

शिक्षा स्वायत्तशासी होनी चाहिए

अपेक्षाओं के दबाव से जूझते शिक्षक शीर्षक से लिखे अपने आलेख में गिरीश्वर मिश्र ने अपने शिक्षकीय भावबोध से प्रेरित होकर आज की शिक्षा और उसकी धुरी माने जाने वाले शिक्षक की वर्तमान दिशा और दशा का जो आकलन किया है, उसे समझने की जरूरत है। स्वतंत्र भारत में राजनीति के चश्मे से देखी जाने वाली शिक्षा का शनैः शनैः क्षरण होना स्वाभाविक था, क्योंकि देश के शासनतंत्र ने शिक्षा के सुधार के लिए अनेक शिक्षा आयोग और समितियां गठित करने में जैसी तत्परता प्रदर्शित की, यदि उतनी ही सतर्कता से सर्वपल्ली राधाकृष्णन, लक्ष्मण स्वामी मुदलियार, डीएस कोठारी, कृष्णामूर्ति जैसे अनेक विद्वान शिक्षाविदों की संस्तुतियों को अपने राजनीतिक हानि-लाभ से परे होकर भारतीय शिक्षा के सुधार के लिए लागू कर दिया होता तो आज तस्वीर दूसरी होती। अब 'बीती ताहि बिसार दे' के शाश्वत सत्य को स्वीकार करते हुए 2019 में मोदी सरकार द्वारा लागू की जाने वाली राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कुछ ऐसा होना चाहिए जिससे देश की समूची शिक्षा व्यवस्था को राजनीति के चंगुल से बाहर निकालकर उसे स्वायत्तशासी बनाया जा सके। शिक्षा की स्वायत्तता से आशय उस अधिकार संपन्नता से है जिसमें देश के शिक्षाविद केवल सुझाव देने तक ही सीमित न रहें अपितु अपनी संस्तुतियों को देश की शिक्षा के हित में लागू करने में भी सक्षम हों। यह तभी संभव होगा जब भारत की शिक्षा न्यायपालिका और चुनाव आयोग की तरह स्वायत्तशासी होगी। देश के शासनतंत्र का उस पर प्रत्यक्ष रूप से नहीं अपितु संविधान सम्मत अप्रत्यक्ष नियंत्रण होगा। अब इस तथ्य को भी स्वीकार करने की जरूरत है कि राष्ट्र की शिक्षा उसकी प्रगति की सूचक होती है तथा उससे जुड़े शिक्षक की

मेलबाक्स

राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके लिए देश की शिक्षा और शिक्षक की दशा एवं दिशा सुधारने के लिए शिक्षा को स्वायत्तशासी बनाने की जरूरत है। क्योंकि शिक्षा राष्ट्र के नव-निर्माण में नींव के पत्थर की भूमिका निभाती है।

डॉ. वीपी पाण्डेय, एसोसिएट प्रोफेसर, अलीगढ़

कानून का पालन जरूरी

जब से नया मोटर व्हीकल एक्ट लागू हुआ है, अफरा-तफरी का माहौल है। पिछले 72 सालों से कानून और नियमों की अनदेखी करना लोगों की आदत सी बन गई है। महानगरों में तो कानून तोड़ना उनकी शान हो गई है। दिल्ली में तो कई बार वाहन चालक यातायात पुलिस को भी घुड़की देते देखे जाते हैं। तेज रफ्तार से आए दिन लोगों की जान जाने, शराब पीकर वाहन चलाते समय कहीं भी टक्कर मार देने और हेलमेट न पहनने के कारण मौत हो जाने की खबरें आती रहती हैं। ये वाकई शर्मनाक है कि दुनिया में सबसे ज्यादा सड़क दुर्घटनाएं भारत में ही होती हैं। आखिर लाइसेंस न रखना, प्रदूषण कंट्रोल सर्टिफिकेट तथा अन्य कागजात साथ रखने में क्या दिक्कत होती है? लोग नियमों का पालन करेंगे तो अन्य समस्याएं नहीं होंगी।

चंद्र प्रकाश शर्मा, दिल्ली

हरियाणा में विपक्ष

हरियाणा में विधानसभा चुनाव का शंखनाद होने वाला है। चुनावी मैदान में उतरने वाले महारथी अपनी रणनीति को धार देने में जुटे हैं। सत्तारूढ़ भाजपा तो पहले से ही जन आशीर्वाद यात्रा के माध्यम से जन संपर्क अभियान में जुटी है, लेकिन बिखरा विपक्ष अभी भी असमंजस में उलझा है। हरियाणा की राजनीति आज भी चौधरी देवीलाल, चौधरी बंसी लाल, चौधरी भजनलाल, चौधरी रणबीर सिंह एवं राव बीरेंद्र सिंह के सियासी परिवारों के इर्दगिर्द घूम रही है। प्रदेश में भाजपा ही ऐसी पार्टी है जो किसी परिवार से नहीं जुड़ी है। आगामी चुनाव के लिए भाजपा पहले ही मैदान में उतर कर ताल ठोक चुकी है, लेकिन विपक्षी पार्टियां आंतरिक कलह से जूझ रही हैं। विपक्ष को अपना अस्तित्व बचाने के लिए पूरे दमखम के साथ चुनाव के मैदान में उतरना होगा।

रणजीत वर्मा, फरीदाबाद

रुकेंगे हादसे

आखिर सरकार को यातायात नियमों के उल्लंघन पर भारी जुर्माने की जरूरत क्यों पड़ी? यह सोचने की जरूरत है। लोगों ने कम जुर्माने को कभी गंभीरता से लिया ही नहीं। अगर पुलिस की सख्ती इसी तरह बरकरार रही तो वह दिन दूर नही जब लोग खुद यातायात के नियमों का पालन करने लगेंगे। इससे सड़क हादसों में भी कमी आएगी।

बाल गोविंद, नोएडा

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :

दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।